भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन

शोधपत्र-हिन्दी

* डॉ. कृष्ण बीर सिंह

भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास

पतन–भगवतीचरण वर्मा का यह उपन्यास सन् 1928 में प्रकाशित हुआ तथा यह उनका प्रथम उपन्यास है। यह उपन्यास ऐतिहासिक है तथा इसमें एक युग विशेष का पतन दिखाया गया है। इसमें अवध के अन्तिम शासक नवाब वाजिद अली शाह के समय को दर्शाया गया है। इसमें नवाब वाजिद अली शाह के व्यक्तित्व को बड़े ही आकर्षक व रोचक ढंग से दिखाया गया है। नवाब साहब विलासिता में डूबे हुए हैं तथा अवध पतनोन्मुखी है। इसके मुख्य पात्र प्रतापसिंह, रणवीर सिंह और सुभद्रा हैं। प्रतापसिंह कपटी व कामुक व्यक्ति हैं। प्रतापसिंह ने रणवीर सिंह को पाल–पोसकर बड़ा किया। रणवीर सिंह को अपने पुत्र के समान मानते हुए भी अपनी कामुक प्रवृत्ति के कारण रणवीर सिंह की प्रेमिका सुभद्रा को सम्मोहित करके नवाब की बेगम बनवा दिया। रणवीर प्रतापसिंह को मारने का असफल प्रयास करता है। प्रतापसिंह की पत्नी सरस्वती अपने पति के मित्र भवानी शंकर पर आसक्त हो जाती है। भवानी शंकर अपनी पत्नी को साथ लेकर लखनऊ आते हैं। सरस्वती भी लखनऊ आती है और प्रताप उसे फिर सम्मोहित कर लेता है। वह भवानी शंकर के साथ कानपुर लौट रही थी कि रास्ते में गंगा पार करते समय नाव उलट जाती है और वह डूब कर मर जाती है। कुछ समय पश्चात् रणवीर नवाब की एक बेगम सितमआरा की सहायता से सुभद्रा को नवाब के हरम से निकालने में सफल हो जाता है लेकिन प्रताप उनका पीछा करता है। रणवीर छुरे से उसे मार देता है लेकिन मरते–मरते वह नाव पलट देता है और तीनों नदी में डूब कर मर जाते हैं।

चित्रलेखा–चित्रलेखा 1934 में प्रकाशित हुआ। यह वर्मा जी का सुप्रसिद्ध उपन्यास है। इस उपन्यास के कारण वर्मा जी का नाम उपन्यास जगत में रोशन हो गया। इस उपन्यास में पाप–पुण्य का विश्लेषण तो दिखाया ही है साथ में प्रेम, नियति, परिस्थिति, ईश्वर, धर्म आदि के बारे में भी बताया है। महाप्रभु रत्नांबर के शिष्य श्वेतांक और विशालदेव इस घटनाक्रम को देखकर अलग–अलग प्रभाव ग्रहण करते हैं। विशालदेव को लगता है कि बीजगुप्त पतित है और कुमारगिरि महान है। वेतांक को लगता है कि बीजगुप्त देवता है और कुमारगिरि पापी है। इस प्रकार से चित्रलेखा उपन्यास में पाप और पुण्य के विश्लेषण को दर्शाया गया है। वर्माजी ने सम्राट चन्द्रगुप्त की सभा में होने वाले शास्त्रार्थ के माध्यम से धर्म, ईश्वर और नीति की व्याख्या भी प्रस्तुत की है।

तीन वर्ष–चित्रलेखा के दो वर्ष पश्चात् सन् 1936 में यह उपन्यास प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास प्रेम पर आधारित है। इसमें यह दर्शाया गया है कि समाज में प्रतिष्ठित नारियों की अपेक्षा वेश्याएँ अधिक श्रेष्ठ हैं। इसमें एक सरल ग्रामीण परिवेश से जुड़े रमेश के माध्यम से बताया है कि किस प्रकार विश्वविद्यालय की चमक–दमक में एक ग्रामीण विद्यार्थी अपना लक्ष्य खो बैठता है। रमेश विश्वविद्यालय में पढ़ने झांसी से इलाहाबाद आकर एकदम शहरी वातावरण से घबरा जाता है। वहाँ उसका परिचय अजीत से होता है। अजीत समाज में उच्च वर्ग के परिवार से संबंध रखता है। उसके (अजीत) साथ रमेश भी उच्च वर्ग मे अपना स्थान बनाता है। रमेश अपने साथ पढ़ने वाली 'प्रभा' नाम की लड़की से प्रेम करने लगता है। वह प्रभा के सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है, लेकिन प्रभा विवाह किए बिना ही प्रेम करना चाहती है। रमेश इलाहाबाद छोड़कर कानपुर चला जाता है। वहाँ पर वह एक सरोज नाम की वेश्या से परिचित होता है। रमेश के अच्छे व्यवहार से सरोज रमेश की श्रद्धालु बन जाती है, परन्तु रमेश सरोज की भावनाओं को नहीं समझ पाता और एक पत्र लिखकर भाग जाता है। सरोज को रमेश के वियोग के कारण तपेदिक हो जाता है। सरोज रमेश को बुलाने के लिए अखबार में एक विज्ञापन निकलवाती है। विज्ञापन पढ़कर रमेश सरोज के पास आ जाता है। सरोज अपनी सारी सम्पत्ति रमेश को सौंप देती है। रमेश को अब प्रेम पर विश्वास हो जाता है। जब रमेश धनी व्यक्ति बनकर

*विभागाध्यक्ष-हिन्दी, एस.एस. जी पारीक स्नातकोत्तर महाविद्यालय बनीपार्क, जयपुर [राज.]

इलाहाबाद आता है तो प्रभा उससे विवाह करना चाहती है लेकिन रमेश इनकार कर देता है।

टेढ़े–मेढ़े रास्ते–इसका प्रकाशन वर्ष 1946 है। यह एक राजनीतिक उपन्यास है। इसमें वर्मा जी ने तीन पात्रों के माध्यम से तीन पार्टियों की क्षमताओं का चित्रण किया है। दयानाथ कांग्रेस पार्टी, उमानाथ कम्युनिस्ट पार्टी और प्रभानाथ क्रान्तिकारी दल के सदस्य हैं। पण्डित रामनाथ तिवारी जमींदार हैं जो विदेशी हुकुमत को मानने वाले हैं। उनके तीन पुत्र दयानाथ, उमानाथ और प्रभानाथ हैं जो अलग–अलग पार्टियों के सदस्य हैं। चारों सदस्य अपने जीवन में अलग–अलग मार्गों पर चलने लगते हैं। दयानाथ कांग्रेस के चुनाव में हार जाता है। वह अपने पिता के पास आता है, लेकिन उसका पिता उसे स्वीकार नहीं करता। जब उमानाथ के विरुद्ध वारंट जारी होता है तो वह भारत छोड़ने के लिए अपने पिता से पैसे मांगता है, लेकिन रमानाथ पैसे देने से इन्कार कर देता है तब उमानाथ अपनी पत्नी की मदद से भारत छोड़कर चला जाता है। प्रभानाथ रेलगाड़ी में आते हुए सरकारी खजाने पर डाका डालते हुए पकड़ा जाता है।

आखिरी दाँव–यह श्रेष्ठ उपन्यास 1950 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में फिल्म–जगत से संबंधित अनेक समस्याओं का चित्रण किया गया है। रामेश्वर अपनी पैत क सम्पति जुए में हार कर बम्बई चला जाता है। चमेली भी पति के अत्याचारों से ऊबकर बम्बई भाग जाती है। चमेली अधेड़ उम्र के व्यक्ति रामेश्वर से प्रेम करने लगती है। उसकी सुन्दरता पर कुछ मनचले युवकों के साथ ही प्रसिद्ध फिल्म व्यवसायी सेठ शिव कुमार भी आकर्षित होते हैं। जुए में मालिक के रूप में हारकर रामेश्वर बड़ा ही दुखी व भयभीत है। चमेली उसे बचाने का प्रयास करती है। वह एक सफल अभिनेत्री बन जाती है। दोनों का प्रेम चलता रहता है। चमेली सेठ के चंगुल में फंस जाती है। सेठ चमेली के माध्यम से धन कमाना चाहता है लेकिन रामेश्वर सेठ को भयभीत कर देता है। सेठ रामेश्वर को अपने रास्ते से हटाने के लिए जुए के अड्डे की सूचना पुलिस को दे देता है। चमेली सेठ की हत्या कर देती है और स्वयं को भी गोली मार लेती है। इस प्रकार से रामेश्वर जीवन का आखिरी दाँव हार जाता है। इस उपन्यास में बम्बई के गुण्डों व जूआ व्यवसाय की आड में चलने वाले अवैध धन्धों का भी सफलता से चित्रण किया गया है।

अपने खिलौने–इसका प्रकाशन वर्ष 1957 है। यह उपन्यास हास्य–व्यंग्य प्रधान है। इसमें उच्च वर्ग की शिक्षित महिलाओं के अस्थिरता पूर्ण स्वभाव को हास्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। युवराज विरेन्द्र प्रताप, जो फ्रांस में भारतीय राजदूत हैं का प्रथम सचिव है, जैसे ही वह आता है तो युवराज का प्रेम जीतने के लिए मीना और अन्नपूर्णा में होड़ सी लग जाती है। दोनों के प्रेमी व्यग्र हो जाते हैं। युवराज की पार्टी में सज–संवर कर जाने वाली मीना के सेंट में अशोक चुपके से 'कॉड लिवर आइल' डाल देता है। दुर्गंध के कारण पार्टी में लोगों के द्वारा प्रकट की गई दुरभावना से मीना को बहुत बड़ा झटका लगता है और मीना बीमार पड़ जाती है। अपना स्वास्थ्य सुधारने के लिए वह रामप्रकाश और अन्नपूर्णा के साथ भ्रमण करने निकल पड़ती है। कैरा कोमल नामक युवती से घबरा कर बम्बई भागा युवराज इन लोगों को बम्बई बुलवा लेता है लेकिन युवराज की मंगेतर (कैरा कोमल) उसे ढूंढती हुई बम्बई आ जाती है। मीना अशोक के साथ तथा अन्नपूर्णा राम प्रकाश के साथ बम्बई से वापस लौट आती हैं।

भूले–बिसरे चित्र–यह उपन्यास सन् 1959 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास वर्मा जी का एक वृहद्काय उपन्यास है। इस पर वर्मा जी को साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है। इस उपन्यास में वर्मा जी ने 1885 ई0 से लेकर 1930 ई0 तक की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समस्याओं, संघर्षों एवं परिवर्तनों का विस्तृत रूप से चित्रण किया है। इस उपन्यास में मुंशी शिवलाल हैं जिनकी आयु पचपन वर्ष हैं, उनके पुत्र ज्वाला प्रसाद नायब तहसीलदार बन जाते हैं। ज्वाला प्रसाद एक ईमानदार व्यक्ति हैं। शिवलाल को अपने पुत्र की यह ईमानदारी रास नहीं आती और वह उससे क्रोधित होकर आत्महत्या कर लेता है। ज्वाला प्रसाद का पुत्र गंगाप्रसाद सीधे डिप्टी कलेक्टर के पद पर नियुक्त होता है। वह कलेक्टर भी बन जाता है लेकिन असमय ही उसकी मृत्यु हो जाती है। गंगाप्रसाद का पुत्र नवल कांग्रेसी होता है और 'नमक बनाओ' आन्दोलन में भाग लेता है। गंगाप्रसाद की पुत्री विधा भी नये विचारों की नारी थी। यह उपन्यास इतना प्रसिद्ध हुआ कि इसका अनुवाद तिब्बती, जापानी, एशियन व अन्य भारतीय भाषाओं में हुआ है।

वह फिर नहीं आई–यह उपन्यास 1960 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास अति लघु है। इस उपन्यास में एक शरणार्थी दम्पति की कहानी है। ज्ञानचन्द कानपुर का एक कुशल व्यापारी है। दिल्ली एक होटल में उनकी मुलाकात रानी श्यामला से होती है। ज्ञानचन्द से जीवनराम का परिचय कराती हुई श्यामला कहती है कि यह मेरा दूर का रिश्तेदार है। रानी श्यामला अपनी करुण कथा ज्ञानचन्द के

सामने सुनाती है। वह बताती है कि लाहौर में वे दोनों सुखी जीवन व्यतीत कर रहे थे। लाहौर के दंगों में उनकी सारी दौलत लूट ली गई और घर जला दिया गया। जीवनराम के एक मित्र ने उनकी प्राण रक्षा की लेकिन इसकी कीमत उसने बीस हजार रुपये मांगी। अपनी पत्नी को मित्र के पास बंधक बनाकर एक साल की अवधि लेकर जीवनराम चला जाता है। एक कम्पनी में गबन करता है और उन्हीं पैसों से पत्नी को छुड़ाता है। पुलिस वारण्ट से बचने के लिए ही उसने ज्ञानचन्द का पैसा गबन किया। ज्ञानचन्द यह सुनने पर जीवनराम को छुड़ा देता है, लेकिन जीवनराम फिर अपनी पत्नी को ज्ञानचन्द के पास बंधक रखकर बीस हजार रुपये कमाने के लिए चला जाता है। एक साल बाद वह लौटकर आता है और पत्नी की गोद में दम तोड़ देता है। पति की मृत्यु के बाद श्यामला स्वेच्छा से वेश्या बन जाती है। कुछ समय पश्चात् वह ज्ञानचन्द के बीस हजार रुपये लौटाने आती है। रुपये लौटाकर चली जाती है। ज्ञानचंद सोचते ही रह जाते हैं कि वह फिर नहीं आई।

सामर्थ्य और सीमा—इस उपन्यास का प्रकाशन वर्ष 1962 है। इस उपन्यास में आज के व्यक्ति की छटपटाहट, निराशा, विकृति और विवशता प्रकट होती है। यह उपन्यास अपने सामर्थ्य की अनुभूति से पूर्ण कुछ विशि ट व्यक्तियों की कहानी है। उत्तरप्रदेश के मंत्री जोखम लाल ने सुमनपुर के विकास की योजना बनाई। इसके लिए उन्होंने पाँच व्यक्तियों को बुलाया। जिसमें – ज्ञानेश्वर राव हैं जो दैनिक पत्र के प्रधान संपादक हैं। वासुदेव चिंतामणि देवलंकर प्रसिद्ध इंजीनियर हैं। रतनचन्द्र मकोला उद्योगपति हैं। अलबर्ट किशन मंसूर आर्किटेक्ट हैं। पण्डित शिवानंद शर्मा साहित्यकार एवं संसद सदस्य हैं। ये सभी मिलकर सुमनपुर के विकास की योजना बनाते हैं। वहां रहते हुए इनका परिचय एक युवा विधवा सुन्दरी मानकुमारी से होता है। ये पांचों व्यक्ति मानकुमारी का प्यार पाने के लिए उसे अलग–अलग तरह के प्रलोभन देते हैं। यह भी इनकी तरफ आकर्षित होती है। एक बार जब पाँचों यशनगर से वापिस जा रहे होते हैं तब वर्षा के कारण रोहिणी नदी का पानी भीषण बाढ़ बनकर आता है और पांचों व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है। मानकुमारी और उसके ससुर नाहरसिंह राजमहल के ऊपर चढ़कर बचना चाहते हैं किन्तु भूकम्प के कारण वे भी डूबकर मर जाते हैं।

थके पाँव—इसका प्रकाशन वर्ष सन् 1963 है। इसमें मध्यवर्गीय समाज की समस्याओं का चित्रण किया है। पचास वर्ष तक संघर्ष करके थके–हारे केशव यह अनुभव करते हैं कि उनका सारा जीवन केवल विवशता की एक कहानी है। वह बी.ए. पास है लेकिन फिर भी क्लर्क की नौकरी करता है। वह अपने बच्चों को उच्च शिक्षा देता है। उनका छोटा लड़का किशन जीवन के प्रति नया दृष्टिकोण रखता है। वह बम्बई में अभिनेता बन जाता है और उसकी बहन माया भी उसकी प्रेरणा से फिल्मों में काम करने लग जाती हे। मोहन को दिन–रात मेहनत करने के कारण टी. बी. हो जाती है। केशवबाबू एक हजार रुपये की रिश्वत लेकर अपने ईमान को गंवा बैठते हैं इससे केशव बाबू को दोहरा दण्ड मिलता है।

रेखा—यह उपन्यास सन् 1964 में प्रकाशित एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इसका कथानक विवाह की सीमा रेखा एवं प्रेम की स्वतन्त्रता की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा पर आधारित है। इसका मुख्य विषय स्त्री–पुरुष के आत्मिक एवं शारीरिक संबंधों की तृप्ति से संबंधित है। रेखा एक धनाढ्य परिवार की लड़की है जो एम.ए. फाईनल की छात्रा है। डॉ0 प्रभाशंकर एक प्रोफेसर हैं। प्रभाशंकर जी केवल डी.लिट् के शोधकों को गाइड किया करते थे। ये अपना नियम भंग करके एम.ए. की छात्रा रेखा के गाइड बनना स्वीकार कर लेते हैं। विवाह के पश्चात् रेखा को शारीरिक अतृप्ति का अनुभव होता है। वह अमेरिका से आए हुए अपने भाई अरूण के मित्र सोमेश्वर से शारीरिक संबंध स्थापित करती है। इसके पश्चात् वह निरंजन कपूर, शिवेन्द्र धीर, योगेन्द्रनाथ मिश्र आदि से अपनी शारीरिक भूख की तृप्ति करती है। रेखा अपने पति को छोड़कर योगेन्द्रनाथ मिश्र के साथ जाना चाहती है, लेकिन बीमार प्रभाशंकर को देखकर उसका मन करूणा से भर जाता है और वह योगेन्द्र को फोन करके साथ जाने में असमर्थता व्यक्त करती है। योगेन्द्रनाथ मिश्र ओसेलो चले जाते हैं और प्रोफेसर की मृत्यु हो जाती है। तत्पश्चात् रेखा अकेली रह जाती है। इस उपन्यास का ताना बाना शारीरिक रूप से अतृप्त एक नारी की मनोवैज्ञानिक कथा पर बुना गया है।

सीधी–सच्ची बातें—इसका प्रकाशन वर्ष 1960 है। यह विशुद्ध यथार्थवादी दृष्टि से लिखा गया उपन्यास है। इसमें वर्मा जी ने पात्रों के चरित्र की दुर्बलताएँ, देश की अनैतिकता और विकृति को सीधे सच्चे ढंग से प्रस्तुत किया है। यह एक विशुद्ध राजनैतिक उपन्यास है। जयप्रकाश को राजनीति में रुचि नहीं थी लेकिन अपने मित्र कमलकान्त के कहने पर वह त्रिपुरी कांग्रेस को देखने जाता है। वहां पर उसकी मुलाकात जसवन्त कपूर, त्रिभुवन मेहता, कुलसुम का वसजी तथा मालती बेला से होती है। जगत सेना में भर्ती हो जाता है, लेकिन बाद में वह वहाँ से आ जाता है। भारत आकर उसको पता चलता है कि उसकी बड़ी बहन

की मृत्यु हो गई। इससे उसके मन को ठेस लगती है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में उसे नौकरी मिल जाती है। कुलसुम के कहने पर वह नौकरी से इस्तीफा दे देता है और कुलसुम के पैसों के सहारे दिन काटता है। गांधी जी की हत्या का समाचार सुनकर जगत का हार्ट फेल हो जाता है। उसकी प्रेमिका कुलसुम उसे 'फरिश्ता' का खिताब दे देती है।

सबहि नचावत राम गोंसाई–यह उपन्यास 1970 में प्रकाशित हुआ। इसमें भारत के पूंजीपति, मन्त्री वर्ग और अधिकारियों की कहानी को व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। लाला घासीराम एक बेईमान दुकानदार हैं। उसके पुत्र मेवालाल के द्वारा 'बूढ़े' कहने पर वह तीर्थयात्रा पर निकल जाता है। मेवालाल का पुत्र राधेश्याम उच्च शिक्षा प्राप्त करके बड़ा उद्योगपति बन जाता है। उत्तरप्रदेश का पेशेवर डाकू नाहर सिंह होता है।

प्रश्न और मरीचिका–यह उपन्यास मार्च, 1973 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास 1947 से लेकर 1963 तक के भारतीय समाज की परिस्थितियों पर आधारित है। उदयराज बम्बई में अपनी शिक्षा पूर्ण करता है। वह भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय के ज्वांइट सेक्रेटरी श्री जयराज, आई.सी.एस. का त्यागा हुआ पुत्र है। पिता के प्रभाव के कारण वह कांग्रेस के प्रभावशाली नेता शर्मा जी का सेक्रेटरी बन जाता है। एक मुसलमान लड़की सुरैया से वह असफल प्रेम करता है। उदयराज संवाददाता की हैसियत से अमेरिका से भारत लौटता है। श्रीमती रूपा शर्मा एक सिद्धान्तहीन महिला होते हुए भी राजनैतिक क्षेत्र में अपना प्रभाव जमा लेती है। आई.सी.एस. अफसर विश्वनाथ मदान की लड़की प्रमीला से उदयराज की शादी हो जाती है। इस उपन्यास में नियतिवाद और गीतादर्शन का समावेश दिखाई देता है।

युवराज चुण्डा–यह उपन्यास 1978 में प्रकाशित हुआ। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है। चित्तौड़ के राजा सिसौदिया राजपूत राणा लाखा चित्तौड़ के राजा थे। उनका ज्येष्ठ पुत्र चुण्डा था। युवराज चुण्डा के साथ मारवाड़ राजकुमारी गुणवती की शादी के लिए आए शगुन के नारियल का लाखा स्वागत करते हैं पर विनोदवश यह कह देते हैं कि उनके लिए (स्वयं के लिए) तो यह नारियल आया न होगा। यह सुनकर चुण्डा कहता है कि आपकी इस बात से राठौड़ों की राजकुमारी मेरी माता के समान हो गई, अब आपको ही उससे विवाह करना चाहिए।

धुप्पल–इसका प्रकाशन वर्ष 1981 है। यह आत्म कथामूलक उपन्यास है। इस उपन्यास में वर्मा जी ने अपने बचपन, शिक्षा–दीक्षा, युवावस्था, जीवन में आने वाले उतार–चढ़ाव आदि का वर्णन किया है। इस उपन्यास में वर्मा जी ने अपने जीवन की वास्तविक घटनाओं का सत्य रूप में वर्णन किया है।

चाणक्य–यह उपन्यास सन् 1982 में प्रकाशित हुआ। यह वर्मा जी का अंतिम उपन्यास है। यह ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें मगध साम्राज्य का चित्रण हुआ है। आचार्य धर्मरक्षित मगध सम्राट महापदमनंद से विष्णुगुप्त को आचार्य पदवी की मान्यता दिलाने राज्य सभा में ले जाते हैं। सभा में उन्होंने शिखा खोलकर प्रतिज्ञा की कि यह शिखा तब तक नहीं बंधेगी जब तक वे नंद वंश का विनाश न कर लेंगे। विष्णुगुप्त चाणक्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। चाणक्य चन्द्रगुप्त का विवाह छम्ब राजा की कन्या से करवाते हैं।

आर्थिक पक्ष–अर्थ समाज को सबसे अधिक प्रभावित करता है। क्योंकि अर्थ अर्थात् मुद्रा के बल पर मानव स्वयं को सुखी रखता है। अर्थ के अभाव के कारण कोई भी व्यक्ति समाज तथा देश प्रगति नहीं कर सकता। अंग्रेजों ने अपने समय में भारत का आर्थिक शोषण किया। भारत देश के धन को दूसरे देशों में भेजने के लिए अंग्रेजों ने न केवल नीतियाँ बनाई, अपितुं अनेक भाडयन्त्र भी रचे। उस युग का वास्तविक चित्रण करने वाला साहित्यकार 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' के बाद 'भगवतीचरण वर्मा' ही है। भगवतीचरण वर्मा ने अपने उपन्यासों में बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की आर्थिक समस्याओं का चित्रण किया है।'[5] वर्मा जी के उपन्यास 'टेढ़े–मेढ़े रास्ते' में एक जमींदार और एक अंग्रेजी डिप्टी कमिश्नर के माध्यम से भारत की आर्थिक दुर्दशा का यथार्थ चित्रण किया है। वर्मा जी ने अपने उपन्यास 'सीधी–सच्ची बातें' में भी द्वितीय विश्वयुद्ध के समय बंगाल के दुर्भिक्ष का बड़ी मार्मिकता से चित्रण किया है।'[6] जब भारत की गरीब जनता अकाल के कारण भूखी मर रही थी तब अंग्रेज सरकार ने अनाज के दाम ओर भी अधिक ऊँचे कर दिये। जमील अहमद इन्हीं परिस्थितियों की ओर संकेत करता हुआ कहता है कि–'तुम यहा तो जानते ही हो कि नई फसल का अनाज बाजार में नहीं आता, नया अनाज लोग नहीं खाते। होता यह है कि एक साल का अनाज स्टाक में पड़ा रहता है' यह स्टाक अगर किसी साल खराब हो जाए तो हमारी हिफाजत कैसे होगी? तो हमारी ब्रिटिश सरकार इस स्टाक को निकलवा रही है अनाज के चढे दामों पर खरीदारी करके। रुपये के लालच में लोग अपना नया अनाज बेच रहे हैं। मेरा ऐसा ख्याल है कि जिस मिकदार में सरकार की खरीदारी हो रही है, उससे दो या तीन साल में अनाज का स्टाक खत्म हो

जाएगा। तब हालत यह आ जायेगी कि अगर फसल होती है तो तुम्हारे पास खाने को है और अगर बरबाद हो जाती है तो तुम्हें भूखों मरना पडेगा।''[7] एक तरफ देश की जनता की स्थिति बड़ी दयनीय थी, दूसरी तरफ व्यापारी वर्ग मुनाफाखोरी में लगा हुआ था। यह ब्लैक मार्केट मानव के बौद्धिक विकास की उपज है जिसका रूप इस विश्वयुद्ध की असाधारण परिस्थितियों में उभर आया है।''[8]

जब तक हमारा देश अंग्रेजों के अधीन था तब तक तो आर्थिक स्थिति का कमजोर होना स्वाभाविक था, लेकिन हमारे देश की स्वतन्त्रता के बाद भी आर्थिक परेशानी का बने रहना बहुत ही दुर्भाग्य की बात है। भारत देश एक कृषि प्रधान देश है इसलिए जब तक कृषि का विकास नहीं होगा तब तक देश विकसित नहीं हो सकेगा। उदयराज के विचार इस सत्यता को इस तरह से प्रकट करते हैं– 'अमीर बेतहाशा अमीर बनते जा रहे थे और साधारण जनसमुदाय बुरी तरह दरिद्रता का जीवन व्यतीत कर रहा था और यह सब हो रहा था। महात्मा गांधी के आदर्शों पर चलने वाली कांग्रेस की छाया में।[9] वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में उच्च वर्ग का चित्रण बड़े मनोयोग के साथ किया है। इस वर्ग में पूंजीपति, जमींदार, बड़े–बड़े अफसर और नेता आ जाते हैं। इनमें कुछ लोग ऐसे हैं जिनकी आत्मा मर जाती है। (आखिरी दाँव के सेठ शिवकुमार, सेठ ीतला प्रसाद,[10] अपने खिलौने के वीरेश्वर प्रताप,[11] भूले–बिसरे चित्र के राजा सत्यजीत प्रसन्न सिंह, शिवकुमार गाबाडिया[12] आदि ऐसे पात्र हैं।) उच्च वर्ग की विकृतियों की ओर संकेत करते हुए वर्मा जी अपने उपन्यास ''भूले–बिसरे चित्र'' में रिपुदमन सिंह के माध्यम से लिखते हैं कि–''यह ऐश्वर्य और भोग–विलास का जीवन, जहाँ कोई चिन्ता नहीं, कोई कर्म नहीं, कोई जिम्मेदारी नहीं.... .. इस जीवन में मनुष्य बड़ी जल्दी से बहकता है। जहां ध ान है, वहां धन ही देवता बन जाया करता है, कयोंकि ध ान में शक्ति केन्द्रित हो चुकी है। यह मेरा दुर्भाग्य है बाबू गंगाप्रसाद कि मैं ऐसे कुल में पैदा हुआ जहां चिन्ताओं के अभाव में विकृतियों का साम्राज्य है।[13]

उच्च वर्ग के अलावा हमारे देश में दो अन्य वर्ग भी हैं– मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग। भारतीय समाज की अध िाकतर समस्याएँ मध्यम वर्ग के हिस्से में रही है। इसलिए मध्यमवर्ग के लोगों का जीवन बहुत ही संघ मिय रहता है। मध्यम वर्ग दुविधाओं से संत्रस्त है क्योंकि वह अतीत की परम्पराओं को तोड़ने में स़क्षम नहीं है। आर्थिक रूप से विपन्न होते हुए भी मिथ्या सम्मान ढोने में यह वर्ग अनेक कठिनाइयों का सामना करता है।''[14] निम्न वर्ग की स्थिति इसके विपरीत है। क्योंकि यह वर्ग अन्ध विश्वासों से पूर्णतः घिरा हुआ है। कुप्रथाओं एवं कुरीतियों से बंधा हुआ है। वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में मध्यमवर्ग के संघर्ष और विवशताओं का यथार्थ चित्रण किया है। 'थके पाँव' उपन्यास के पात्र मोहन और केशव ऐसे ही मध्यमवर्गीय पात्र हैं जो अपने वर्ग की मान्यताओं और मर्यादाओं से जूझ रहे हैं। इसी उपन्यास का पात्र किशन महत्वाकांक्षी मध्यमवर्गीय व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है।

आर्थिक पक्ष को वर्मा जी के उपन्यासों का प्राण कह सकते हैं। साधारणतया उनके सभी उपन्यासों में आर्थिक परिवेश देखने को मिलता है लेकिन 'भूले–बिसरे चित्र', 'टेढे–मेढे रास्ते', 'सीधी–सच्ची बातें' तथा 'प्रश्न और मरीचिका' नामक उपन्यासों में वर्मा जी ने सन् 1885 से लेकर 1962 तक के भारत की आर्थिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है। मनुष्य को अर्थ के लिए किन–किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है का यथार्थ चित्रण वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में किया है। वर्मा जी के उपन्यासों में युग का जीवन्त परिवेश देखने को मिलता है। यही कारण है कि वर्मा जी अपने युग के ''उच्चतम क्लास के साहित्यकारों' की श्रेणी में गिने जाते हैं। इस संदर्भ में डॉ0 रघुवंश जी लिखते हैं कि– ''उपन्यासकार के लिए परिवेश का महत्व है, एक प्रकारसे वह उसका आधार है। वह न केवल अपनी रचना का सारा कच्चा माल वहाँ से जुटाता है, वरन् अनुभव के विभिन्न स्तरों के बीच से अपनी रचना–दृष्टि विकसित करता है।''[15] वर्मा जी युवावस्था से ही प्रगतिशील विचारधारा के कवि रह चुके हैं। इनकी यह विचारधारा उनके उपन्यासों में भी देखने को मिलती है। पूँजीपतियों के विरुद्ध उनकी यह विचारधारा इस प्रकार से प्रस्तुत हुई है– सीधी–सच्ची बातें–''पूँजीवाद मक्कारी और शैतानियत है।''[16]

सामर्थ्य और सीमा– इस पूँजीवाद का देवता–पैसा है, यह सब कुछ कर सकता है, हरेक आदमी इस देवता का गुलाम है। एक–से–एक लुटेरों और बदमाशों को इस पूँजीवाद ने जन्म दिया है।''[17] हमारे समाज में मजबूरी के कारण स्त्रियों को वेश्या बनकर अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता है। वर्मा ने इसके लिए हमारे समाज को ही उत्तरदायी ठहराया है। वर्मा जी ने सजग आर्थिक चेतना के माध्यम से उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग तथा निम्न वर्ग की अटल गहराइयों में प्रवेश किया।

राजनीतिक चेतना–उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतीय राजाओं और नवाबों में पारस्परिक कलह का वातावरण बना हुआ था। राजाओं और नवाबों की कमजोरी का लाभ उठाते हुए अंग्रेजों ने भारतीय राजनीति में हस्तक्षेप

करना प्रारम्भ कर दिया था। अंग्रेज अपने भाडयन्त्रों और कूटनीति के द्वारा भारतीय रियासतों को हड़पने लगे थे। भारतीय राजाओं का ध्यान इस तरफ नहीं था क्योंकि वे विलास में डूबे हुए थे।''[18] इन सभी स्थितियों की तरफ ध्यान आकर्षित करते हुए वर्मा जी ने अपने ''पतन'' नामक उपन्यास में लिखा है कि 'अंग्रेज अवध को हड़पना चाहते थे, पर नियमानुसार वे अवध को छीन नहीं सकते थे। अन्त में उन्हें एक बहाना मिल गया। अवध का कुप्रबन्ध ही उनके लिए अवध पर अधिकार जमाने के लिए यथेष्ट था।''[19] 1905 में ''बंग–भंग'' आन्दोलन के कारण देश में एक जाग ति की लहर आ गई। सन् 1911 ई0 की दिल्ली दरबार की घटना का वर्णन वर्मा जी ने अपने उपन्यास ''भूले–बिसरे चित्र'' में किया है। प्रत्येक अंग्रेज प्रत्येक भारतीय को अपना गुलाम समझता है और उस पर स्वयं राज करता है। इसका चित्रण भी वर्मा जी ने अपने उपन्यास में किया है। वर्मा जी ने इस समय की कुछ मुख्य राजकीय घो णाओं का जिक्र नहीं किया। उन्होंने केवल अभिजात्य वर्ग के लोगों की विलासिता का चित्रण किया है। अपने उपन्यास ''भूले–बिसरे चित्र'' में वर्मा जी ने अल्लामा बहशी और स्वामी जटिलानन्द के प्रकरण के माध यम से यह दर्शाया है कि किस प्रकार अंग्रेज मुसलमानों को उकसा करके साम्प्रदायिकता को भड़काते थे। वर्मा जी ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास ''भूले–बिसरे चित्र'' में खिलाफत आन्दोलन की चर्चा की है। वर्मा जी के उपन्यासों में हिन्दू–मुसलमान की आपसी या जातीय समस्या का भी चित्रण मिलता है। फरहतुल्ला के माध्यम से वर्मा जी कहते हैं कि– ''यह मसला आज का नहीं है, सदियों से यह मौजूद है, और यह मसला इतनी आसानी से हल भी नहीं हो सकता। इसकी वजह यह है कि मुसलमान ने उस समाज को मन्जूर नहीं किया जो हिन्दू का है। हम दोनों का समाज अलग है। हम लोगों का कल्चर अलग–अलग है।''[20]

वर्मा जी ने जमींदारों के शोषण का वर्णन करने में विशेष रुचि नहीं ली। उन्होंने जमींदार पात्रों को जिस रूप में दिखाया है, इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सामन्तवाद के प्रति उनके दिल में किंचित सहानुभूति थी। वर्मा जी के उपन्यासों में मजदूर वर्ग या निम्न वर्ग का समावेश बहुत कम मात्रा में देखने को मिलता है।

उच्च वर्ग के अलावा हमारे देश में एक ऐसे वर्ग का उदय हुआ जिसे मध्यम वर्ग की संज्ञा दी जाती है। इस वर्ग का असन्तुलित विकास आधुनिक भारतीय समाज में एक प्रमुख घटना के रूप में हुआ है। इस वर्ग के विकास काल से लेकर आज तक के इतिहास को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि मध्यवर्ग का जीवन और व्यक्तित्व बहुत उथल–पुथल एवं संघर्षों से भरा हुआ है। इस वर्ग के व्यक्ति दुविधाओं से संत्रस्त हो उठते हैं। वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में मध्यवर्ग की विवशता, संघर्ष और उससे उत्पन्न विभिन्न कठिनाइयों का यथार्थ चित्रण किया है। इस वर्ग का बिम्ब हमें वर्मा जी के उपन्यासों में भली–भांति देखने को मिलता है।

सांस्कृतिक चेतना–संस्कृति समाज और उसके व्यक्तियों के अन्तःकरण का वास्तविक स्वरूप होती है, जो हमारे धर्म, आस्था, विश्वास का स्थायी स्वरूप है। स्थिरता संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता होती है। समाज और जीवन की मूलभूत प्रव तियों का नाम ही संस्कृति है। संस्कृति के कुछ लक्षण होते हैं। जैसे–संस्कृति एक सामाजिक प्रक्रिया है, संस्कृति का स्वरूप आदर्श होता है, संस्कृति व्यावहारिक होती है, संस्कृति का प्रवाह निरन्तर होता रहता है, संस्कृति में मानव की आध्यात्मिक तथा भौतिक प्रवृत्ति का समन्वय होता है।

सांस्कृतिक चेतना विभिन्न संस्कृतियों में एकता लाने का काम करती है। संस्कृति समाज की आत्मा होती है। उसके किसी भी स्वरूप का परिवर्तन समाज का परिवर्तन होता है। संस्कृति के किसी भी अंग में थोड़ा सा भी परिवर्तन होने से समाज के आदर्श और मान्यताओं के नये प्रतिमान दिखायी देने लगते हैं। प्रत्येक मनुष्य के समक्ष जीवन के महत्वपूर्ण एवं जीते–जागते प्रश्न हमेशा उठते रहते हैं। सांस्कृतिक चेतना प्राची में वैसे ही प्रश्नों की खोज कर, वर्तमान में उनके उत्तर की खोज करती है।'[21] सांस्कृतिक चेतना आपसी कटुता, संकीर्णता, जातीयता, साम्प्रदायिकता आदि से दूर रहकर सच्चे अर्थों में संस्कृति के उदात्त चरित्रों, अवतारी महापुरूषों से अपना साक्षात्कार करने की प्रेरणा प्रदान करती है।

संस्कृति के स्वरूप में जो परिवर्तन होता है, उसका कारण समाज के सदस्यों की नयेपन की ओर झुकाव की मनोवृत्ति होती है। इसका कारण है कि पुरानी मान्यताओं से व्यक्ति धीरे–धीरे ऊबने लगता है और नयेपन की तलाश करने लगता है। इसको हम सामाजिक परिर्वन की संज्ञा दे देते हैं। यह परिवर्तन संस्कृति के बाह्य कलेवर में होता है, उसकी आत्मा ज्यों की त्यों सुरक्षित रहती है। आगे आने वाली मानव पीढ़ियाँ अपने अनुभव तथा प्रयास से उसके कलेवर को संवारने का कार्य करती चलती है और संस्कृति की धारा निरन्तर प्रवाहमान बनी रहती है। उदाहरणतया– 'राजाराम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती और न जाने

कितने लोग इन लोगों ने हिन्दु धर्म में न जाने कितने सुधार किये। ब्रह्म समाज ने ईसाइत से मोरचा लिाय, आर्य समाज ने इस्लाम से मोर्चा लिया।"[22]

वर्मा जी के उपन्यास "भूले–बिसरे चित्र" का एक पात्र गंगाप्रसाद,स्वामी जटिलानन्द का पूरा इतिहास बताते हुए आर्य समाज के प्रति लोक धारण को अभिव्यक्त करते हुए कहता है कि –"भई यह आर्य समाज भी खूब है। एक से एक जाहिल और गंवार इकट्ठे हुए हैं इसमें।"[23] वर्मा जी के उपन्यासों में राजनीति की तुलना में सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिवेशों का समावेश बहुत ही कम हुआ है। क्योंकि वर्मा जी प्रगतिशील विचारों से प्रभावित होते हुए भी नियतिवाद में पर्याप्त आस्था रखते है। स्वयं वर्मा जी ने नियतिवाद के संबंध में अपना विचार स्पष्ट करते हुए लिखा है कि–"मनुष्य परतन्त्र है, परिस्थितियों का दास है, लक्ष्यहीन है। वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में हिन्दु धर्म की सड़ी–गली परम्पराओं तथा व्यवस्थाओं का खुलकर विरोध किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों में हिन्दुओं में जाति के आधार पर ऊँच–नीच की भावना तथा छुआछूत की भावना को व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। इन्होंने अर्थलोलुप व्यक्तियों द्वारा धर्म के माध्यम से धन अर्जित करने की योजनाओं का खुलासा भी अपने उपन्यासों में किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों में हिदु धर्म में मृत्यु के समय गंगा जल पिलाने, जमीन पर लिटाने, गोदान कराने आदि का उल्लेख किया है। इनके साथ–साथ पाश्चात्य सभ्यता के अनुसार जन्मदिन के अवसर पर मोमबत्ती जलाना तथा केक काटने की प्रथा के प्रचलन को भी बड़े कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। वर्मा जी ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास "भूले–बिसरे चित्र" में धर्म के दो रूपों का चित्रण किया है– 1. रुढ़िग्रस्त 2. साम्प्रदायिक। वर्मा जी ने अपने उपन्यासों में गांधीवादी विचार दर्शन का भी उल्लेख किया है। "सीधी–सच्ची बातें" उपन्यास के पात्र परमेश्वर लाल कहते हैं कि "ये अहिंसा और मनोबल वैयक्तिक गुण ही हैं और इसीलिए यह अहिंसा चिरस्थाई नहीं हो पाई। महात्मा गांधी ने इस अहिंसा और मनोबल को सामाजिक गुण बनाने का यत्न किया है।"[25] अपने उपन्यास 'सबहिं नाचवत राम गोंसाई' में वर्मा जी ने भारत की राजनीति में गांधी जी का उदय, 1921 में असहयोग आन्दोलन की असफलता, 1945 में नेताओं की जेलों से मुक्ति तथा 1946 में चुनाव आदि घटनाओं का वर्णन किया है।"[26] वर्मा जी के हृदय में मानवता के प्रति अथाह ममता थी, यही कारण है कि उन्होंने जीवन की शाश्वत एवं महत्वपूर्ण समस्याओं की भांति समाज, राष्ट्र एवं मानवता की ज्वलंत समस्याओं पर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्मा जी के उपन्यास प्रगति के अग्रदूत हैं। सही रूप में कहें तो वर्मा जी के उपन्यास वर्तमान की मानवता के लिए दिशा–बोध प्रदान करने वाले हैं। इन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से वर्तमान पीढ़ी को प्रगति के पथ पर अग्रसर होने का संदेश दिया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 वर्मा भगवतीचरण– आधुनिक कवि– 10, प 0 9 2 वर्मा भवगतीचरण– आधुनिक कवि, प 0 14 3 साप्ताहिक हिन्दुस्तान– 4 से 10 सितम्बर, 1983, प 0 21 4 वर्मा भगवतीचरण– विस्म ति के फूल– भूमिका, प 0 3 5 वर्मा भगवतीचरण की उपन्यास चेतना, डॉ0 इन्दु शुक्ला, पृ0 58 6 वर्मा भगवतीचरण, सीधी–सच्ची बातें, प 0 56, 570, 572 7 वर्मा भगवतीचरण– सीधी सच्ची बातें, प 0 342 8 वर्मा भगवतीचरण– सीधी सच्ची बातें, प 0 516 9 वर्मा भगवतीचरण प्रश्न और मरीचिका, प 0 541 10 वर्मा भगवतीचरण, आखिरी दाँव, प 0 61 11 वर्मा भगवतीचरण, अपने खिलौने, प 0 61 12 वर्मा भगवतीचरण, भूले–बिसरे चित्र 13 वर्मा भगवतीचरण, भूले–बिसरे चित्र, प 0 36 14 वर्मा भगवतीचरण, टेढ़े–मेढे रास्ते, प 0 128 15 डॉ0 रघुवंश– धर्मयुग (10 मई, 1970), प 0 15 16 वर्मा भगवतीचरण– सीधी–सच्ची बातें, प 0 354 17 वर्मा भगवतीचरण– सामर्थ्य और सीमा,प 0 152 18 वर्मा भगवतीचरण के उपन्यासों में चित्रित देशकाल और भारतीय समाज, डॉ0 इन्दु शुक्ल, पृ0 17 19 वर्मा भगवतीचरण, पतन, प 0 181 20 वर्मा भगवतीचरण, भूले–बिसरे चित्र, प 0 55 21 वाजपेयी– प्रसाद के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक नाटकों का अनुशीलन– प 0 177, अध्याय– 9 22 वर्मा भगवतीचरण– सीधी–सच्ची बातें, प 0 179 23 वर्मा भगवतीचरण– भूले–बिसरे चित्र, प 0 323 24 वर्मा भगवतीचरण– चित्रलेखा, प 0 144 25 वर्मा भगवतीचरण–सीधी–सच्ची बातें, प0 368 26 डॉ0 इन्दु शुक्ला– भगवतीचरण वर्मा की उपन्यास चेतना, प 0 59

सहायक ग्रन्थ–1. उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा : व्यक्तिवादी एवं नियतिवादी चेतना के संदर्भ में, रमाकांत श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1979 2. उपन्यासकार भवगतीचरण वर्मा, उर्मिला देवी, काशी 1976, 3. उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, राजेन्द्र कुमारी, राजस्थान 1984 4. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगीन चेतना, बैजनाथप्रसाद शुक्ल, प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली 1977 5. भगवतीचरण वर्मा और उनका कथा–साहित्य, दयाशंकर शुक्ल, बड़ौदा, 1976 6. भगवतीचरण वर्मा और जैनेंद्रकुमार के साहित्य में निरूपित जीवन–मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन, दीपा पांडेय, आगरा, 1981 7. भगवतीचरण वर्मा का कथा–साहित्य : एक अनुशीलन, विद्याचरण शर्मा, सागर, 1978 8. भगवतीचरण वर्मा के उपन्सयासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन, स्नेहबाला, दिल्ली, 1983 9. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन, प्रभातकुमार, मगध, 1984 10. भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों की शिल्पविधि, वीणा गुप्ता, दिल्ली, 1980 11. भगवतीचरण वर्मा के कथा–साहित्य में युग–चेतना, रीना रस्तोगी, उस्मानिया, 1982 12. भगवतीचरण वर्मा : व्यक्तित्व और कृतित्व, शिवानी सक्सेना, काशी 1977 13. भगवतीचरण वर्मा : साहित्य और जीवनदर्शन, विदुला, मेरठ, 1977 14. श्री भगवतीचरण वर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अनुशीलन, करूणा नरेश उमटे, नागपुर 1979 15. व्यक्तित्ववादी एवं नियतिवादी चेतना के संदर्भ में भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों का अनुशीलन, आर.आर. श्रीवास्तव, 1975 16. सामाजिक विकास की प्रक्रिया में भगवतीचरण वर्मा की कृतियों का योगदान, ाकुंतला सिंह, काशी, 1977 17. भगवतीचरण वर्मा और यशपाल के उपन्यासों में युग–चित्रण का तुलनात्मक अध्ययन, जगदीशचंद्र, कुरुक्षेत्र, 1983